"आदिवासी विमर्श : चिंतन, सृजन एवं सरोकार"

माधुरी राजाराम चव्हाण (शिंदे)
पीएच.डी शोधार्थी ,
शिवाजी विद्यापीठ , कोल्हापुर
दूरभाष क्र. 7972342621

सारांश –

प्राचीन काल से आदिवासी, वनों पहाडों में रहते आ रहे है । वनों में रहने के कारण उनका जीवन पुर्नतया वनों पर निर्भर रहता है। उनकी समस्याएँ भी उन्ही जंगलों, वनों और जमीनों से जुडी है। अंग्रेजो के काल में जल, जमीन, जंगलों का व्यापारियों द्वारा दोहन शुरू हुआ। आदिवासी जनसमुदाय की अस्तित्व पर ही हमला हो गया, जिससे उनके स्वातंत्र्य, अस्तित्व पर संकट खडा हुआ। उन्हें अनेक समस्याओं से जुझना पडा जिसकी प्रतिक्रिया के स्वरूप आदिवासियों ने प्रतिरोध करना प्रारंभ किया। जिसका प्रमुख उदाहरण है चिपको आंदोलन। आजादी के बाद अन्य क्षेत्रों के विकास की तुलना में आदिवासी क्षेत्रों का विकास हमेशा पिछडा रहा है। आदिवासियों का जीवन ऐसेही वर्षो तक अंधकारमय रहा। विकास की किरणे उनकी तरफ फैली ही नही। ईसी अंधकार को चिरने के लिए आदिवासी विमर्श के रूप में एक आशा की किरण नजर आई। साहित्य के क्षेत्र में पहले ही दलित विमर्श, स्त्री विमर्श अपना अलग स्थान बना चुके थे। इन सारी विमर्शों के बीच और एक विमर्श अपनी पहचान बनाने की कोशीश कर रहा था और वो है आदिवासी विमर्श। आदिवासी विमर्श आदिवासियों की अस्मिता, अधिकार, स्वतंत्रता, मानवता के अधिकार प्राप्त करने का एक साहित्यिक आंदोलन रहा। आदिवासी विमर्श आदिवासियों के प्रश्नों से जुडे स्वरों की पहचान कराता है। आदिवासी विमर्श साहित्य कहानी, उपन्यास, व्यंग, नाटक,कविता आदि विधाओं में लिखा जा रहा है। लेखक अपनी रचनाओं में आदिवासी जीवन से जुडी समस्याओं को उजागर करने का प्रयास कर रहे है, जिसमे प्रमुख है – रमणिका गुप्ता , महाश्वेता देव, संजीव, मैत्रयी पुष्पा, राकेश वत्स, वंदना टेटे आदि।

बीज शब्द – आदिवासी , जनजाती , समाज , संस्कृति।

प्रस्तावना –

भारतीय भाषा साहित्य की परंपरा अलग – अलग भाषाओं की वजह से महत्त्वपूर्ण रही है। हमारी परांपराओं में साहित्य संस्कृति की परंपरा बस लिखित या मौखिक रूप में सीमित नही है। इन दोनों से हि मिलकर हमारी साहित्य परंपरा उज्ज्वल बनी है। फिर भी बहुतसी भारतीय भाषाओं को मुख्य भाषा का स्थान नही मिला है। जिसके परिणाम स्वरूप वह भाषाएँ हम सिर्फ 'बोली ' के रूप में पहचानते है। इनमें से कुछ बोलियाँ ' आदिवासी ' नाम से जानी जाती है। डॉ . रमणिका गुप्ता के अनुसार –

" बिना जंगल, जमीन अपनी भाषा, जीवन शैली, मुल्यों के बिना आदिवासी, आदिवासी नही रह सकता। आदिवासी इस देश का मूल निवासी है "(रमणिका गुप्ता – आदिवासी कौन, राधाकृष्ण प्रकाशन- पृ.सं.86)

आदिम काल से जो वनों में रहता आ रहा है और अपनी संस्कृति, अपनी प्रकृति की रक्षा करता आ रहा है, वही आदिवासी है। आदिवासी संस्कृति में प्राचीन काल से ही मौखिक रूप में साहित्य का सृजन होता रहा। जिसमे गीत, महाकाव्यों का समावेश होता है। उदाहरण के तौर पर वाल्मीकि का रामायण , स्वयंभू का पउमुचरिउ। आदिवासी साहित्य कि प्रकृति और परंपरा को समझने के लिए, आदिवासी साहित्यों का जन साहित्य में सर्जनात्मक व्यवहार होना आवश्यक है। आदिवासी साहित्य में कविता हमेशा सर्वोपरि रही है । जादातर आदिवासी साहित्य कविता या गीत के रूप में सामने आया है । आदिवासी जनजाति के समस्याओं को केंद्र में रखकर आदिवासी साहित्य अपने विकास का अगला पढाव पार कर चुका है। हिन्दी कि पहली आदिवासी कवयित्री के रूप में सुशीला सामंत को जाना जाता है। हिन्दी कि पहली आदिवासी कहानी 'रोज के रकट्टा' है , तथा 'कचनार' आदिवासी विमर्श से संबंधित प्रथम हिन्दी उपन्यास है , जो वृंदावनलाल वर्मा ने लिखा है। आदिवासी कवियों में निर्मला पुतुल, वंदना टेटे, महादेव टोप्पो, सुषमा असुर, शकुंतला मिश्र विशेष रूप से जाने जाते है। इनके साहित्य में स्वानुभूती कि झलक मिलती है, जिसमे सामाजिक जीवन, नारी संघर्ष, अस्तित्व कि लढाई, शिक्षा का संघर्ष दिखाई देता है।

शोध विषय का विश्लेषण –

आदिवासी समाज एक ऐसा खास समाज है जो हमारे ऐतिहासिक विकास कि दृष्टि से हमारे वर्तमान स्थिति से बहुत अलग स्थिति में रह रहा है। उनके सामने खडे सवाल उनका धर्म , संस्कृति ,भाषा ,जीवन निर्वाह की पद्धति सबकुछ हमारे समाज से

अलग और अपरिचित है। (डॉ. तलवार 1999 की टिप्पणी) आदिवासियों की समस्याओं पर प्रकाश डालने के लिए साहित्यिक आंदोलन द्वारा आदिवासी समाज में जागृती निर्माण हुई। आदिवासी विमर्श में आदिवासी तथा गैर आदिवासी साहित्यकारों द्वारा प्रचुर मात्रा में लेखन कार्य हुआ, जिससे आदिवासियों के तरफ देखने का लोगों का नजरियाँ बदल गया। आदिवासियों के अस्तित्व के साथ – साथ प्रकृति को बचाने के लिए आदिवासी हिन्दी साहित्य विमर्श की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। आदिवासी विमर्श में आदिवासी जनजाति में जन जागृती करके आदिवासियों को हमारी मुख्य धारा में लाने का कार्य किया जा रहा है।

आदिवासी साहित्य के विकास का अध्ययन करते समय हमें यह भी ध्यान में रखना चाहिए की वह साहित्य मूल रूप से किसके द्वारा लिखा गया है। आदिवासी साहित्यिक द्वारा या गैर आदिवासी साहित्यिक द्वारा यह बात जानना समझना जरूरी है , क्योकि कोई भी साहित्य अपनी चर्मोत्कर्ष पर तभी पहूँचता है जब उसमे उस लेखक द्वारा स्वानुभूती के भाव प्रकट हो।आदिवासी साहित्य को सही मात्रा में न्याय तभी मिलेगा जब वह साहित्य किसी आदिवासी साहित्यकार द्वारा लिखा जाए। एसा नही की गैर आदिवासी साहित्यकारों द्वारा आदिवासी साहित्य को न्याय नही मिलता। गैर आदिवासी लेखकों ने भी प्रचुर मात्रा में आदिवासी साहित्य लिखकर आदिवासियों की समस्याओं को उजागर करने का प्रयास किया है। लेकिन आदिवासियों की अपनी अलग दुनिया है , उनकी अपनी अलग संरचना है। आदिवासी साहित्यकार उनमें से ही एक होने की वजह से उनकी समस्याओं को उनके दुख दर्द को नजदिकी से समझ सकता है, जिससे उस साहित्य में आदिवासी जनजाति की संवेदना अच्छेसे उभर आती है।

आदिवासी लोगों के जीवन की समस्याएँ सामान्य लोगों से अलग होती है। भारत के हिंदू समाज से आदिवासी समाज की स्थिति अलग है। यह भिन्नता सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक तथा लगभग सभी स्तरों पर अलग है। इस दृष्टि से आक्रोश (गोविंद निहलानी ,1980) और 'लाल सलाम' (गगनबिहारी बारोट 2002)की कथाएँ आदिवासी समस्याओं पर केंद्रित है। वर्तमान साहित्यकारों ने आदिवासियों को केंद्र में रखकर कई रचनाएँ की है। जिसमे आदिवासियों के रीति - रिवाज, संस्कृति, आचार – विचार आदि प्रस्तुत है। आदिवासी विमर्श में उनकी सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था, कलाओं, प्रथाओं का वास्तविक चित्रण मिलता है। आदिवासियों की शोषण की वास्तविक स्थिति समाज के सामने आती है, जिससे आदिवासी चेतना जागृत होती है। आदिवासी साहित्यकारों ने अपनी मौखिक साहित्य परंपरा को लिखित साहित्य में लाकर समृद्ध करने का प्रयास किया है। और इस प्रयास को आगे लेकर जानेवाले आदिवासी साहित्यकार कुछ इस प्रकार है-

निर्मला पुतुल –

निर्मला जी संथाली भाषा की एक प्रसिद्ध आदिवासी लेखिका है। उनका जन्म 06 मार्च 1972 को दुधानी, दुमका जिले में हुआ। उन्होंने नर्सिंग डिप्लोमा करने के बावजुद स्वयं को सामाजिक कार्य तथा साहित्य लेखन में समर्पित किया। निर्मला जी हिन्दी आदिवासी साहित्य धारा की सर्वाधिक चर्चित कवयित्री है। उनकी कृतियाँ कुछ इस प्रकार है –' अपने घर की तलाश में (2004), 'नगाडे की तरह बजते शब्द'(2005), 'बेघर सपनें' (2009) आदि।

चादर में बच्चे को पीठ पर लटकाये ,
धान रोपती पहाडी स्त्री।
रोप रही है अपना पहाड - दुख ,
सुख की एक लहलहाती फसल के लिए।
पहाड तोडती , तोड रही है ,
पहाडी बंदिश और वर्जनाएं.....

वंदना टेटे-

वंदना जी का जन्म 13 सितंबर 1969 को राजस्थान में हुआ। उन्होंने राजस्थान से ही स्नातकोत्तर पदवी प्राप्त की। स्कूल कॉलेज में ही उन्होंने लिखना शुरू किया था। उन दिनों ऊनकी कविता, लेख, कहानियाँ स्थानिक एवं राष्ट्रीय पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही। वंदना जी शोषित एवं वंचित आदिवासी समाज के शिक्षा, साक्षरता तथा अन्य मुद्दों पर पिछले 25 सालों से सक्रिय है।

हम बस प्रकृति चाहते है ,
भात जितना, नदियाँ चाहते है।
माड - झोर (दाल) जितना ,
साग तिथन चाहते है।

जंगल जितना औऱ पहाड ,
बस नमक भर .....

सुषमा असुर –

सुषमा असुर, असुर समुदाय से है। अन्य आदिवासी समुदायों सें असुर आदिवासी समुदाय अभी भी 'लेखन संस्कृति' में अविकसित है। सुषमा जी को असुर समुदाय में पहले साहित्यकार होने का श्रेय प्राप्त है। उनकी 2010 में प्रकाशित 'असुर सिरिंग ' असुर साहित्य की प्रथम पुस्तक है।

हे धरती के पुरखों,
हे आसमान के पुरखों ,
ओ हमारे माता – पिता,
ओ सभी असुर बुढा – बुढिया,
हम सिखेंगे तुम्हारी तरह बोलना.....

इस तरह आदिवासी साहित्यकारों ने अपनी अलग – अलग प्रभावशाली रचनाओं द्वारा आदिवासी समस्याओं को वाणी देने की कोशीश की है।

इन तीनों साहित्यकारों की तरह अन्य भी आदिवासी साहित्यकार प्रसिद्ध है जैसे की – सुशीला सामंत, राम दयाल मुंडा, लाल मीणा, बाबुलाल मुर्मू , महादेव टेप्पो, मंगल सिंह मुंडा आदि। शब्दों की मर्यादा की वजह से सबका सविस्तर परिचय देना संभव नही इसलिए आदिवासी लेखकों की संक्षिप्त जानकारी देना ही उचित लगता है। आदिवासी साहित्यकारों की तरह गैर आदिवासी साहित्यकारों का भी आदिवासी विमर्श में योगदान सराहनीय है , तथा कुछ गैर आदिवासी साहित्यकारों की मुख्य रचनाओं का संक्षिप्त परिचय हम लेते है। जिसमें आदिवासी विमर्श मुख्य रूप से उभर आया है।

महाश्वेता देवी : 'जंगल के दावेदार' –

इस उपन्यास में महाश्वेता देवी जी ने बिहार के अलग –अलग जिलों के वनों में रहने वाले आदिवासियों का चित्रण किया है। वास्तव में 'जंगल के दावेदार' यह उपन्यास एक बांग्ला उपन्यास 'अरण्येर अधिकारी' का हिन्दी अनुवाद है, जो महाश्वेता देवी जी ने किया है। बिहार के मुंडा आदिवासियों के लोकगीतों तथा उनके जीवन मूल्य, अशिक्षा, अंध विश्वासों का चित्रण इस उपन्यास में मिलता है।

मैत्रेयी पुष्पा : 'अल्मा कबुतरी '-

'अल्मा कबुतरी' यह उपन्यास मध्य प्रदेश के जंगलों में बसनेवाले खानाबदोश कबुतरा आदिवासियों की उपेक्षित, अपमानित ,प्रताडित महिला की स्थिति का सजीव चित्रण है।

डॉ. रमणिका गुप्ता : 'सीता- मौसी' –

'सीता - मौसी' एक उपन्यास न होकर 'सीता' और 'मौसी' दो अलग -अलग उपन्यास है, यह उपन्यास आदिवासी की उस स्थान पार केंद्रित है ,

जो धीरे – धीरे विकसित होकर औध्योगिक केंद्र बन चुका है ,जिससे आदिवासी संस्कृति खत्म होती जा रही है और आदिवासी समाज मजबूरी में मजदूर बनता जाता है।

इसतरह आदिवासी विमर्श में आदिवासी तथा गैर आदिवासी लेखकों का समान योगदान है, जिसकी वजह से आदिवासियों की समस्याओं को उजाले में लाने का एक नया मार्ग मिल गया।

निष्कर्ष -

आदिवासी साहित्य केवल एक सहानुभूती नही बल्कि उनके जीवन संघर्ष से प्रेरित एक आंदोलन है। आदिवासी विमर्श से समाज में नए दृष्टिकोन का विकास हुआ, जिससे आदिवासी संस्कृती को देखने का नजरियाँ बदलकर आदिवासी संस्कृती को बचाने में सहयोग मिला। प्रारंभ में आदिवासी और दलित साहित्य एक माना जाता था। लेकिन आदिवासी की व्याप्ति, विशेषता देखकर उनका अलग रेखांकन किया जाने लगा, उसका ही नाम आदिवासी विमर्श है। आदिवासी साहित्य के अंतर्गत आदिवासी

तथा गैर आदिवासी साहित्य का समावेश होता है। तथापि दोनो भी साहित्यकारों ने मिलकर आदिवासी समस्याओं को उजाले मे लाकर आदिवासी विमर्श को न्याय दिलाने में समान योगदान दिया है। और इसी साहित्यिक आंदोलन से आदिवासी विमर्श को देखने की एक नई दृष्टी निर्माण हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1) आदिवासी गरासिया साहित्य, 'भाखर रा भौमिया'- अर्जुनसिंह शेखावत , साहित्य अकादमी , न्यू दिल्ली
2) आदिवासी साहित्य : परंपरा और प्रयोजन – वंदना टेटे, प्यारा केरकेट्टा फाऊंडेशन रांची, झारखंड -2013
3) आदिवासी साहित्य यात्रा : रमणिका गुप्ता, रमणिका फाऊंडेशन प्रथम संस्करण , राधाकृष्ण प्रकाशन- 2008
4) आदिवासी साहित्य में आदिवासी समाज व संस्कृती का विवेचनात्मक अध्ययन – सीमा मोनरिया , भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय , उदयपूर
5) समकालीन आदिवासी कवियों की कविताओं में अभिव्यक्त आदिवासी विमर्श – श्री हिरामन टोंगारे, सांगली - 2019